जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

समताभाव की प्राप्ति का एकमात्र उपाय वृत्ति का स्वभावसन्मुख होना ही है।

ह्न बारह भावना : अनुशीलन, पृष्ठ-27

वर्ष : 28, अंक : 24 | सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मार्च (द्वितीय), 2006 | प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी** | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

फाल्गुन-अष्टाह्निका महापर्व सानन्द सम्पन्न

1. जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में दिनांक ७ से १४ मार्च, २००६ तक पर्व के अवसर पर श्रीमती चित्रादेवी ध.प. श्री प्रवीणकुमारजी शाह की ओर से पंचमेरु-नन्दीश्वर विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रतिदिन प्रात: पूजन-विधान के पश्चात् पण्डित शांतिकुमारजी पाटील के योगसार प्राभृत ग्रन्थ पर एवं रात्रि में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल के पुरुषार्थसिद्ध्युपाय ग्रन्थ पर प्रवचन हुये। प्रतिदिन सायंकाल जिनेन्द्र भक्ति का विशेष आयोजन किया गया।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री के निर्देशन में पण्डित चिन्मयजी शास्त्री पिड़ावा एवं पण्डित आदित्यजी खुरई ने सम्पन्न कराये।

2. मालेगाँव (महा.) : पर्व के अवसर पर समाज के विशेष आमंत्रण पर जयपुर से पधारे ब्र. यशपालजी जैन द्वारा दोनों समय तत्त्वार्थसूत्र के प्रथम अध्याय पर प्रवचनों का लाभ मिला। आपके द्वारा कण्ठपाठ की प्रेरणा दी गई। अनेक लोगों ने कण्ठपाठ सुनाया।

3. अहमदाबाद (गुज.) : यहाँ श्री दिग. जैन सीमंधर जिनालय वस्त्रापुर में श्री कल्पद्रुम महामण्डल विधान का आयोजन हुआ। इस अवसर पर ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के प्रात: समयसार व रात्रि में मोक्षमार्गप्रकाशक पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित सुबोधजी शास्त्री शाहगढ एवं पण्डित प्रयंकजी शास्त्री रहली ने कराये।

दोनों समय गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति हुई।

नवरंगपुरा-अहमदाबार स्थित दिगम्बर जैन मंदिर में पण्डित कोमलचन्दजी जैन टडा के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ मिला।

4. मुम्बई : श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु समाज बृहन्मुम्बई के संयोजकत्व में मुम्बई के विभिन्न उपनगरों में निम्नानुसार आध्यात्मिक व्याख्यान-माला का आयोजन किया गया, जिससे महती धर्म प्रभावना हुई ह्न

श्री सीमन्धर जिनालय **जबेरी बाजार** में पण्डित स्वानुभवजी शास्त्री अहमदाबाद, **दादर** में पण्डित कमलकुमारजी जैन जबेरा, **घाटकोपर** में पण्डित कमलचन्दजी जैन पिड़ावा, **मलाड (ईस्ट)** में पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन बिजौलियाँ, **मलाड (वेस्ट)** में पण्डित ज्ञायकजी जैन राजकोट एवं पण्डित सौरभजी जैन शहपुरा, **बोरीवली** में पण्डित शैलेषभाई पी. शाह मुम्बई, **भायंदर** में पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन तथा **दहीसर** में पण्डित गुलाबचन्दजी जैन बीना के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ स्थानीय समाज को मिला।

5. अजमेर (राज.) : यहाँ श्री वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट के तत्त्वावधान में श्री सीमन्धर जिनालय में अष्टाह्निका पर्व के अवसर पर श्री समयसार-कलश मण्डल विधान का भव्य आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रतिदिन आत्मार्थी पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जबलपुर के मार्मिक प्रवचन हुये। प्रथम दिन पण्डित संजीवकुमारजी गोधा, जयपुर के दो प्रवचनों का भी लाभ मिला। रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति होती थी।

विधान के सम्पूर्ण कार्य श्री हीराचन्दजी बोहरा के निर्देशन में पण्डित अभिनयजी शास्त्री जबलपुर एवं पण्डित सुनीलजी 'धवल' ने सम्पन्न कराये।

श्रुत विराजमानकर्त्ता श्री अशोककुमारजी जैन परिवार दिल्ली थे। झण्डारोहण श्री प्रदीपकुमारजी चौधरी परिवार किशनगढ़ ने किया। **ह्न विजय जैन**

6. दिल्ली : यहाँ अध्यात्मतीर्थ आत्मसाधना केन्द्र पर श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन किया गया।

प्रतिदिन प्रात: ब्र. कैलाशचन्दजी 'अचल' ललितपुर के समयसार एवं रात्रि में पण्डित जयकुमारजी जैन बांरा के विधान की जयमाला पर प्रवचन हुये।

विधि-विधान के समस्त कार्य विधानाचार्य पण्डित मनीषकुमारजी शास्त्री पिड़ावा एवं पण्डित विरागकुमारजी शास्त्री जबलपुर ने सम्पन्न कराये।

स्थानीय विद्वान पण्डित संदीपजी शास्त्री, पण्डित अमितजी शास्त्री, पण्डित निकलंकजी शास्त्री एवं पण्डित सुरेन्द्रजी का सहयोग रहा।

रात्रि में विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों में गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के जीवनचरित्र की झलक प्रस्तुत की गई। **ह्न आदीश जैन**

साधना चैनल देखना न भूलें

प्रतिदिन रात्रि में 10.20 पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचनों को देखना/सुनना न भूलें। प्रसारण में 5-7 मिनिट की देरी भी हो सकती है। यदि निर्धारित समय से 10 मिनिट बाद तक भी प्रवचन प्रारंभ नहीं हो तो श्री पीयूषकुमारजी शास्त्री से 9414717829 अथवा (0141) 2705581 नं. पर सम्पर्क करें।

सम्पादकीय –

ये तो सोचा ही नहीं

ह्न रतनचन्द भारिल्ल

*(अध्यात्मरत्नाकर, सिद्धहस्त लेखक एवं प्रसिद्ध जैन उपान्यासकार पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल की अनेक पुस्तकें लाखों की संख्या में घर-घर पहुँच चुकी है। उपान्यास विधा को वर्तमान समय में नया आयाम देनेवाले उक्त लेखक की 'नींव का पत्थर' नामक कृति का अब तक आपने आद्योपान्त वाचन किया होगा। जैन-अजैन समाज की वर्तमान युवा पीढ़ी भी आपकी कृतियों से लाभान्वित होती रही है। इसी बात को लक्ष्य में लेकर आपने अब एक और नवीन पुस्तक का लेखन प्रारंभ किया है। **'ये तो सोचा ही नहीं'** के नाम से लिखी जा रही इस नवीन पुस्तक में समागत विषय-वस्तु की सामान्य जानकारी पाठकों को हो; इस उद्देश्य से प्रकाशकीय एवं प्रस्तावना को यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। आगामी अंक से आपको इसमें प्रतिपाद्य जीवनोपयोगी विषयों का लाभ मिलेगा। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक)***

कृति के प्रकाशकीय में ब्र. यशपालजी जैन लिखते हैं कि ह्न अध्यात्मरत्नाकर, सिद्धान्तसूरि, लेखनी के जादूगर, जैनरत्न आदि अनेक उपाधियों से अलंकृत पण्डित रतनचन्द भारिल्ल की सरल सुबोध शैली में लिखित कृति **'ये तो सोचा ही नहीं'** नैतिक मूल्यों पर आधारित, अध्यात्मज्ञान की ओर अग्रसर करनेवाली अपने ढंग की अनूठी पुस्तक है। इसे प्रकाशित करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता है।

पुस्तक को पढ़ने के पहले यदि इसकी प्रस्तावना पढ़ ली जाय तो पूरी पुस्तक पढ़ने की प्रेरणा स्वतः मिल जायेगी। पुस्तक का प्रत्येक अध्याय आपको यह सोचने को बाध्य करेगा कि ह्न 'अरे ! ये तो हमने सोचा ही नहीं।' इससे पाठकों को बहुत कुछ ऐसी नवीन जानकारी प्राप्त होगी, जिसके विषय में पाठकों ने कभी सोचा ही नहीं होगा, गंभीरता से विचार किया ही नहीं होगा।

चारों गतियों और चौरासी लाख योनियों में मानव जीवन ही सर्वश्रेष्ठ है, उसमें भी स्वस्थ शरीर, सोचने की शक्ति, उत्तम कुल एवं अध्यात्म रुचि की प्राप्ति अति दुर्लभ है, सौभाग्य से वे सब साधन हमें सहज सुलभ हो गये हैं, परंतु उसका बहुभाग रोटी, कपड़ा और मकान की समस्या-सुलझाने में ही चला जाता है। लोक में यह भी एक ऐसी अनिवार्य आवश्यकता है, जिसके कारण परलोक के कल्याण की बात सोचना असंभव नहीं तो कठिन तो है ही। फिर भी सोचना तो पड़ेगा ही, अन्यथा पता नहीं यह दुलर्भता से प्राप्त चिन्तामणि सा बहुमूल्य मानव जीवन संसार सागर में कहाँ डूब जाय? यह हमारी ज्वलन्त समस्या है। इस समस्या के सरल और सफल समाधान के लिए आप इस कृति को अवश्य पढ़ें।

प्रकाश्य कृति की प्रस्तावना में लेखक स्वये लिखते हैं कि ह्न यदि आपके मन में ऐसा प्रश्न उठे कि ह्न 'ऐसा क्या है इस कृति में ह्न जिसके लिए अपना बहुमूल्य समय बर्बाद किया जाये तो इस प्रस्तावना को आप अवश्य पढ़ लें। संभव है इसको पढ़ते ही आपको पूरी पुस्तक पढ़ने का भाव जग जाय और आपको बहुत कुछ ऐसा ज्ञान मिल जाय, जिससे आप कह उठें कि 'ये तो कभी सोचा ही नहीं' तथा यह कृति आपके जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन ला दे, आपको आनन्द की अनुभूति से भर दे।

इस उपन्यास का एक-एक पात्र अपने जीवंत आचार-विचार से आपको कुछ न कुछ ऐसा संदेश देगा जो आपके लिए सुखद और सफल जीवन जीने को न केवल प्रेरित करेगा; बल्कि मार्ग दर्शन भी देगा।

वस्तुतः लौकिक सुखमय जीवन के लिए जितनी जरूरत पैसे की है, उससे कहीं अधिक आवश्यकता मानसिक संतुलन की है; क्योंकि मानवीय दुःख दो तरह के होते हैं ह्न एक दैहिक दुःख और दूसरा मानसिक दुःख। पहला दुःख दूर करने का सम्बन्ध भौतिक अनुकूलताओं से है और दूसरा दुःख दूर करने का उपाय आध्यात्मिक ज्ञान है, जिसकी चर्चा इस कृति में भरपूर की गई है।

भौतिक अनुकूलता की प्राप्ति में भी परिश्रम के साथ पुण्य कर्म का ही सर्वाधिक योगदान होता है, परिश्रम तो सभी करते हैं; पर सद्भाग्य के बिना सफलता सबको एक जैसी नहीं मिलती। अध्यात्म के गहरे रहस्यों को कोई जाने या न जाने; पर पुण्य-पाप का सामान्य परिचय तो पूर्व संस्कारों से आठ-दस वर्ष के बालकों को भी हो जाता है।

एक बार मैं एक पुरस्कार वितरण समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में एक स्कूल में गया। वहाँ यद्यपि बालक छोटे थे; पर साथ में पालक भी आये थे। छोटे-बड़े सभी कुछ न कुछ नवीन प्रेरणा लेकर जायें, इस पवित्र भावना से मैंने अपने भाषण में कुछ प्रश्न पूछे ह्न पहला प्रश्न था ह्न क्या हम सबकी शकल और अकल एक जैसी है? उत्तर था ह्न नहीं।

मैंने और भी दो तीन प्रश्न पूछे ह्न ''क्या हम सब एक जैसे अमीर/गरीब हैं? सबके माता-पिता एक जैसे स्वभाव के हैं? सबके घरों में एक जैसी सुख-सुविधायें हैं? सबका एक ही उत्तर था ह्न नहीं, नहीं, नहीं।''

मैंने अन्त में पूछा ह्न ''इस असमानता का कारण क्या है'' ह्न एक आठ वर्षीय बालक बोला ह्न ''जिसने पिछले जन्म में जैसा पुण्य-पाप किया, उसके परिणामस्वरूप वैसे ही उसे सुखद-दुःखद संयोग इस जन्म में मिले हैं। छोटे बालक के मुँह से अनुकूल उत्तर पाकर सभी को सुखद आश्चर्य हुआ।

मैंने उस बालक के उत्तर की प्रशंसा करते हुए स्पष्ट किया ह्न देखो, एक बच्चा पैदा होते ही राजकुमार की तरह चाँदी के पालने में झूलता है। सोने की चम्मच उसके मुँह में होती है, दूसरा फुटपाथ पर पैदा होता है, होश संभालते ही भीख का कटोरा उसके हाथ में होता है, अभाव में जीवन व्यतीत करता हुआ एक दिन फूटपाथ पर ही भूखा-प्यासा तड़फ-तड़फ कर मर जाता है। जन्मजात यह अन्तर बताता है कि व्यक्ति अपने पूर्वकृत भले-बुरे कर्मों का ही फल भोगता है।

अतः यदि हम आर्थिक अनुकूलता के द्वारा भौतिक सुख और मानसिक शान्ति चाहते हैं तो हमें पुनर्जन्म में आस्था रखते हुए अहिंसक और सदाचारी जीवन जीना होगा। आजीविका हेतु भी ऐसे शुभ काम करने होंगे, जिनसे पुण्यार्जन हो। निर्दयता, बेईमानी छल-कपट धोखाधड़ी जैसे पाप परिणामों से हमें बचना ही होगा, अन्यथा इन परिणामों का फल तो तिर्यंचगति है, जिसके दुःख हम प्रत्यक्ष देख ही रहे हैं।

पुण्य से धनादि के अनुकूल संयोग तो मिलेंगे ही, मानसिक संतोष भी मिलेगा। घर-बाहर में विश्वास बढ़ेगा और हमें यशस्वी जीवन जीने के साथ पारलौकिक आत्मकल्याण के निमित्त भी मिलेंगे।''

अफसोस यह है कि न जाने क्यों, हम मात्र वर्तमान जीवन को सुखद करने के प्रयत्नों में ही अपनी सम्पूर्ण शक्ति एवं समय झोंक रहे हैं, जबकि यही **जन्म सब कुछ नहीं** है, इस जन्म के पहले भी हम थे और मृत्यु के बाद भी रहेंगे। यद्यपि इस जन्म में स्थिर आजीविका भी अतिआवश्यक है, इसके बिना परलोक सम्बन्धी आत्मोद्धार की बात सोचना असंभव नहीं तो कठिन तो है ही। अतः आजीविका का मुद्दा भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है, पर यही सब कुछ नहीं है। यदि इसे ही सब कुछ मान भी लिया जाय तो इसमें भी सफलता के लिए सद्भाग्य अपेक्षित है, और वर्तमान का सत्कर्म ही भविष्य के सद्भाग्य का निर्माता है अतः इसके लिए भी अध्यात्मज्ञान का आलंबन अनिवार्य है।

आज विश्व के प्रायः सभी धर्म निर्विवाद रूप से इस बात से एकमत हैं कि ये जीवात्मा अनादि से हैं और अनन्तकाल तक रहेंगे और अपने-अपने पुण्य-पाप के अनुसार चारों गतियों में पुनः पुनः जन्म-मरण करते रहेंगे।

गीता में भी श्रीकृष्ण कहते हैं ह्न

''नैनं छिदन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्तायो न शोषयति मारुतः॥२/२३

हे अर्जुन! यह आत्मा शस्त्रों से कटता नहीं है, आग से जलता नहीं है, इसे पानी गला नहीं सकता और वायु सुखा नहीं सकती।

सभी धर्मों के मूलभूत आध्यात्मिक लक्ष्य तो लगभग एक जैसे ही हैं। सभी ने आत्मा-परमात्मा एवं पुण्य-पाप के सिद्धान्तों को स्वीकार किया है। पुनर्जन्म में अपनी आस्था जताई है। एतदर्थ सभी धर्मों ने आजीविका की कला के साथ आत्मोद्धार की कला में निष्णात होने हेतु सत्कर्म करने और दुष्कर्म त्यागने के उपदेश दिए हैं। कहा भी है ह्न

''कला बहत्तर पुरुष की, तामें दो सरदार।
एक जीव की जीविका, दूजा जीव उद्धार॥''

अध्यात्मिक कला का अर्थ है ह्न आत्मज्ञान में आनन्दानुभूति करना। 'अध्यात्म' दो शब्दों से मिलकर बना है ह्न अधि+आत्म = अध्यात्म। 'अधि' का अर्थ ज्ञान होता है। अतः आत्मा सम्बन्धी ज्ञान को अध्यात्म कहते हैं। आत्मा-परमात्मा का ज्ञान ही वास्तविक अध्यात्म है।

आध्यात्मिक दृष्टि से कला और विज्ञान में भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। आत्मा-परमात्मा को जानना/पहचानना कलात्मक विज्ञान है और आत्मा में जमना-रमना वैज्ञानिक कला है। जिसतरह साइकिल बनाना विज्ञान का काम है और साइकिल चलाना एक कला है, विज्ञान रिसर्च है, खोज है और कला अभ्यास। आत्मा-परमात्मा की खोज आध्यात्मिक विज्ञान है और उसमें जमना-रमना, उसी के ध्यान में स्थिर होना अध्यात्म की वैज्ञानिक कला है।

अतः यदि हम काम-क्रोध-मद-मोह आदि विकारों का त्यागकर मुक्त होना चाहते हैं, स्वयं आत्मा से परमात्मा बनना चाहते हैं तो विश्व व्यवस्था को समझना होगा चाहे वह विश्व व्यवस्था ऑटोमेटिक हो या ईश्वर कृत हो। दोनों ही स्थितियों में यह तो निश्चित ही है कि उस भले-बुरे कार्य के कर्ता हम तुम नहीं हैं, यदि ऐसा स्वीकार कर लिया जाये तो हमारे क्रोधादि विकार स्वतः समाप्त हो जायेंगे; क्योंकि जब हम दूसरों को अपने अहित का कर्ता मानते हैं तो क्रोध आता है, हित का कर्ता मानते हैं तो उस पर प्रेम उमड़ता है, राग होता है। जब यह कहा जाय कि **हुइए वही जो राम रचि राखा** तो फिर यदि क्रोध करना ही है तो 'राम' पर करो, निरपराधी अड़ौसी-पड़ौसियों पर क्यों करते हो?

यदि पुण्य-पाप पर ही विश्वास हो जाय तो भी अपने पुण्य-पाप के फलानुसार ही भला-बुरा हुआ। अड़ौसी-पड़ौसी फिर भी निरपराधी रहे। इस तरह वे किसी भी हालत में क्रोधादि के पात्र नहीं हैं। ऐसी श्रद्धा वालों के जीवन में धीरे-धीरे काम-क्रोधादि विकारों का नाश हो जाता है।

अतः लौकिक और पारलौकिक सुख-शान्ति के लिए उक्त सिद्धान्तों पर विचार करें, इन्हें अपनायें और सुख पायें।

ध्यान रहे, यही जन्म सब कुछ नहीं है, अतः मात्र इसकी अनुकूलतोके लिए ही न जिएँ, अगले जन्म के बारे में भी सोचें। यह पढ़कर आपको निःसंदेह ऐसा लगेगा कि ह्न **ये तो सोचा ही नहीं।** ●

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

आत्मार्थी छात्र डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के सान्निध्य में रहकर चारों अनुयोगों के माध्यम से जैनधर्म का सैद्धान्तिक अध्ययन कर सकें तथा साथ ही संस्कृत, न्याय, व्याकरण आदि विषयों का आवश्यक ज्ञान प्राप्त करे ह्न इस महत्त्वपूर्ण उद्देश्य से जयपुर में विभिन्न ट्रस्टों के सहयोग से श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय चल रहा हैं, जिसमें लगभग 165 छात्र अध्ययन कर रहे हैं।

अबतक 385 छात्र शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण करके शासकीय एवं अर्द्धशासकीय सेवाओं में रहकर विभिन्न स्थानों में तत्त्वप्रचार की गतिविधियाँ संचालित कर रहे हैं, जिनमें से 56 छात्र जैनदर्शनाचार्य की स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके हैं।

ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रवेश पानेवाले छात्रों को राजस्थान विश्वविद्यालय की जैनदर्शन (तीन वर्षीय शास्त्री स्नातक) कोर्स की परीक्षायें दिलाई जाती हैं, जो बी.ए. के समकक्ष हैं तथा सरकार द्वारा आई. ए. एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगिता परीक्षा में सम्मिलित होने के लिये मान्यता प्राप्त हैं।

शास्त्री परीक्षा में प्रवेश के पूर्व छात्र को योग्यतानुसार दो वर्ष का राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर (राज.) का उपाध्याय परीक्षा का पाठ्यक्रम पढ़ाया जाता है जो हायर सैकेण्ड्री (12वीं) के समकक्ष है। इसप्रकार कुल 5 वर्ष का पाठ्यक्रम है। इसके बाद दो वर्ष का जैनदर्शनाचार्य का कोर्स भी है, जो (एम.ए.) के समकक्ष है।

उपाध्याय में प्रवेश हेतु किसी भी प्रदेश के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड की सेकेण्डरी (दसवीं) परीक्षा विज्ञान, गणित, सामाजिक विज्ञान व अंग्रेजी सहित उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

यहाँ डॉ.हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, बाल ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील, पण्डित संजीवकुमारजी गोधा एवं पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री के सान्निध्य में छात्रों को निरंतर आध्यात्मिक वातावरण प्राप्त होता है।

सभी छात्रों को आवास एवं भोजन की सुविधा नि:शुल्क रहती है।

आगामी सत्र 15 जून 2006 से प्रारंभ होगा। स्थान अत्यंत सीमित है, अत: प्रवेशार्थी शीघ्र ही निम्नांकित पते से प्रवेशफार्म मंगाकर अपना प्रार्थना-पत्र अंक सूची सहित जयपुर प्रेषित करें।

यदि प्रवेश योग्य समझा गया तो उन्हें **देवलाली-नासिक (महाराष्ट्र) में 09 मई से 26 मई, 2006 तक** होनेवाले ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर में साक्षात्कार हेतु बुलाया जायेगा, जिसमें उन्हें प्रारंभ से अन्त तक (18 दिन) रहना अनिवार्य होगा।

यदि दसवीं का परीक्षाफल अभी उपलब्ध न हुआ हो तो पूर्व परीक्षाओं की अंक सूची की सत्यप्रतिलिपि के साथ प्रार्थनापत्र भेज सकते हैं। दसवीं का परीक्षा परिणाम प्राप्त होते ही तुरंत भेज दें।

देवलाली का पता –
पूज्यश्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,
कहाननगर, लामरोड, बेलतगांव रोड
देवलाली-नासिक-422401 (महा.)
फोन (0253)2492278, 2492274

पण्डित रतनचन्द भारिल्ल
प्राचार्य,
श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय,
ए-4, बापूनगर, जयपुर-15 (राज.)
फोन (0141) 2705581, 2707458

क्यों लें महाविद्यालय में प्रवेश ?

1.श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय का सन् 1977 से 28 वर्षों का गौरवशाली इतिहास है।

2. यहाँ पूर्णत: धार्मिक परिवेश मिलता है, जिससे बालक संस्कारशील धर्मनिष्ठ बन जाते हैं।

3. डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, ब्र. यशपालजी जैन, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील आदि अनेक विद्वानों के सान्निध्य में सतत प्रशिक्षण से जैनतत्त्वज्ञान/दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान बनते हैं।

4. पूरे देश में धार्मिक अवसरों पर प्रवचन/विधान आदि कार्यों के निमित्त भ्रमण के अवसर के साथ-साथ समाज के साथ रहने का प्रायोगिक ज्ञान सीखने को मिलता है।

5.जैनदर्शन के विद्वान होने से स्व के कल्याण के साथ-साथ अपने परिवार-समाज के कल्याण में निमित्त होते हैं।

6. छात्रावास में रहने से अपने हिताहित का स्वयं निर्णय करने की सामर्थ्य प्रगट होती है।

7. यहाँ विभिन्न प्रान्तों के छात्रों के साथ रहकर पूरी भारतीय संस्कृति का परिचय प्राप्त करने का अवसर मिलता है।

8. महाविद्यालय के छात्र औसतन प्रतिवर्ष राजस्थान बोर्ड तथा विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में मैरिट लिस्ट में स्थान प्राप्त करते हैं।

9. संस्कृत भाषा में शास्त्री (बी.ए.) की डिग्री राज. संस्कृत विश्वविद्यालय की होने से अपेक्षाकृत रोजगार के अधिक उन्नत अवसर उपलब्ध होते हैं।

10. दर्शन व संस्कृत विषय के साथ आई.ए.एस. जैसी राष्ट्रीय प्रतियोगी परीक्षा व आर.ए.एस. आदि प्रान्तीय प्रतियोगी परीक्षाओं में उत्तीर्णता के अवसर प्राप्त होते हैं।

11. छात्रों की वक्तृत्व शैली, तर्क शैली एवं अध्ययनशीलता का विशेष विकास होता है, जिससे छात्र अन्य क्षेत्रों में भी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

इसप्रकार टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय में प्रवेश पाकर आपके बालक का सर्वांगीण विकास होता है। वह अपने और अपने परिवार, समाज की उन्नति में निमित्त होता है। जैनदर्शन का विद्वान बनकर स्व-पर कल्याण के सम्पादन हेतु अग्रसर होता है।

क्या आप नहीं चाहते कि आपका बालक भी ऐसा हो ? यदि हाँ ... तो महाविद्यालय में प्रवेश हेतु बालक को **दिनांक 9 मई से 26 मई 2006 तक देवलाली (नासिक) महाराष्ट्र** में आयोजित शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर में अवश्य भेजें।

ह्न पीयूष शास्त्री एवं धर्मेन्द्र शास्त्री

विद्वत्परिषद् के चुनाव 30 जुलाई को

नई दिल्ली : श्री अखिल भारतीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् की कार्यकारिणी की आवश्यक बैठक दिनांक 5 मार्च को डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। बैठक में कार्यकारिणी के सर्वाधिक सदस्य उपस्थित थे। सभी ने एक स्वर से डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल का आगामी 3 वर्ष के लिए विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष पद हेतु नाम प्रस्तावित किया। विधिवत चुनाव 30 जुलाई को जयपुर में सम्पन्न होगा। चुनाव अधिकारी श्री अनूपचन्दजी एडवोकेट, फिरोजाबाद को नियुक्त किया गया है।

ह्न अखिल बंसल

पुरस्कार वितरण समारोह सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल स्मारक भवन में प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों द्वारा दिनांक 25 दिसम्बर से 5 जनवरी तक विभिन्न आध्यात्मिक एवं खेलकूद प्रतियोगितायें सम्पन्न कराई गई। जिसका पुरस्कार वितरण दिनांक 25 फरवरी 2006 की रात्रि में डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

जिसमें **अंताक्षरी प्रतियोगिता** में प्रथम स्थान विवेक जैन व सन्मति जैन पिड़ावा ने, द्वितीय स्थान निखिल जैन कोतमा व अभयजैन खडैरी ने तथा तृतीय स्थान विजय जैन व अक्षय जैन ने प्राप्त किया।

भजन प्रतियोगिता में प्रथम स्थान विवेक जैन दलपतपुर ने, द्वितीय स्थान कु.स्वाति जैन जयपुर ने एवं तृतीय स्थान निखिल जैन कोतमा व शशांक जैन जबलपुर ने प्राप्त किया।

जीव बलवान या कर्म बलवान विषय पर आयोजित **उपाध्याय वर्ग की वाद-विवाद प्रतियोगिता** में पक्ष से अनुराग जैन भगंवा ने प्रथम, नितेश जैन आरोन ने द्वितीय तथा विपक्ष से अभिषेक जोगी गजपंथा ने प्रथम एवं अंकित जैन लूणदा ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

संसार में सुख है या नहीं विषय पर आयोजित **शास्त्री वर्ग की वाद-विवाद प्रतियोगिता** में पक्ष से अंकुर जैन देहगांव व प्रसन्न शेटे कोल्हापुर ने प्रथम, किशोर धोंगडे रहाटगांव ने द्वितीय तथा विपक्ष से संभव जैन नैनधरा ने प्रथम और जितेन्द्र जैन मुम्बई ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता में उपाध्याय वर्ग से स्वाति जैन जयपुर ने प्रथम, अजय पहाड़िया पीसांगन ने द्वितीय व सुधीर जैन शाहगढ ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। **शास्त्री वर्ग से** प्रसन्न शेटे कोल्हापुर ने प्रथम, अंकुर जैन देहगाँव ने द्वितीय एवं आदित्य जैन खुरई ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।

श्लोक पाठ प्रतियोगिता में राहुल जैन अलवर व नितेश जैन आरोन ने क्रमश: प्रथम-द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

जैन धर्म के सिद्धान्तों का व्यावहारिक जीवन में उपयोग विषय पर आयोजित **शास्त्री वर्ग की निबन्ध प्रतियोगिता** में कमलेश जैन बण्डा ने प्रथम व वीरेन्द्र जैन बरां ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

अहिंसा से विश्व शांति विषय पर आयोजित **उपाध्याय वर्ग की निबन्ध प्रतियोगिता** में विशेष जैन बड़ामलहरा एवं संदीप बड़कुल ने प्रथम, अंकित जैन लूणदा ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

सभी विजेताओं को पुरस्कार राशि व प्रमाण-पत्र देकर पुरस्कृत किया गया। खेलकूद प्रतियोगिताओं के विजेताओं को ट्रॉफी देकर पुरस्कृत किया गया। सभी प्रतियोगितायें शाकुल जैन मेरठ, अचल जैन ललितपुर, जितेन्द्र चौगुले भिलवडी व शशांक जैन अभाना के मुख्य संयोजकत्व में सम्पन्न हुईं।

धर्म प्रभावना

खैरागढ़ (छ.ग.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मंदिर में दिनांक 23 से 25 फरवरी, 06 तक पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री जयपुर के समयसार ग्रन्थ पर मार्मिक प्रवचन हुये। ज्ञातव्य है कि यहाँ प्रतिदिन दोनों समय पण्डित पन्नालालजी गिडिया के प्रवचन होते हैं।

होलिका

चमत्कार हो गया, चमत्कार हो गया, गजब हो गया, भाईयों गजब..

अरे कुछ बोलगा भी कि बस चिल्लाता रहेगा ?

हिरण्यकश्यप के आदेश पर होलिका प्रहलाद को जलाकर मारने के लिये अपनी गोद में रखकर आग पर बैठी।

फिर।

फिर क्या होलिका को वरदान था कि वह आग में नहीं जलती; पर..

पर-पर क्या ? जल्दी बताओ।

अरे ! होलिका जल गई और प्रहलाद भयंकर लपटों के बीच से हंसता खेलता बाहर आ गया।

वाह- वाह-वाह !

ऐसे ही अनंत काल से अष्टकर्म की होलिका मिथ्यात्व हिरण्यकश्यप के आदेश पर आत्मा को नष्ट करने के लिये अपनी सारी शक्ति का प्रयोग करती है; पर धन्य है आत्मा का अतुल्य बल जो अष्ट कर्मों की भयंकर लपटों के बीच भी प्रफुल्लित रहता है। और यह आत्मस्वास्थ्य के बल अष्टकर्म की होलिका को जलाकर मुस्कुराता हुआ अविचल गति प्राप्त करता है।

जिनालय का शिलान्यास : गुजरात राज्यपाल द्वारा

उमता (मेहसाणा-गुज.) : यहाँ दिनांक 25 फरवरी को एक भव्य समारोह में गुजरात के राज्यपाल पण्डित नवलकिशोर शर्मा ने मंत्रोच्चारण के बीच कमल जिनालय का शिलान्यास किया।

पाँच वर्ष पूर्व उत्खनन में यहाँ 11 वीं शताब्दी का अत्यन्त कलात्मक एवं विशाल जैनमंदिर तथा दिगम्बर जैन मूर्तियाँ प्राप्त हुई थीं। जिस स्थान पर यह धरोहर प्राप्त हुई वहाँ 35 फुट ऊँचा टीला था तथा उस पर गत 125 वर्षों से एक सरकारी स्कूल चल रहा था।

मंदिर को पुरातत्त्व विभाग ने अपने आधीन लेकर संरक्षित स्मारक घोषित कर दिया है तथा सभी प्रतिमायें इस मंदिर की खोज के प्रेरक आचार्य श्री निर्भयसागरजी के नाम से बनीं आचार्य निर्भयसागर जन कल्याण समिति के संरक्षण में दे दी है।

ग्राम पंचायत उमता ने मंदिर निर्माण हेतु चार एकड़ भूमि प्रदान की है। राज्यपाल ने इसी भूमि का शिलान्यास किया।

समारोह के विशिष्ट अतिथि पाली लोकसभा सदस्य श्री पुष्प जैन थे तथा अध्यक्षता जैन संस्कृति रक्षा मंच के अध्यक्ष श्री मिलापचन्दजी डंडिया ने की।

पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम

दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीरजी द्वारा संचालित अपभ्रंश साहित्य अकादमी द्वारा 'पत्राचार प्राकृत सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम' चलाया जा रहा है। इसका आठवाँ सत्र 1 जुलाई 2006 से प्रारंभ होगा। इसमें प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं/विषयों के प्राध्यापक अपभ्रंश, प्राकृत शोधार्थी एवं संस्थानों में कार्यरत विद्वान सम्मिलित हो सकेंगे। नियमावली एवं आवेदन पत्र दिनांक 25 मार्च से 15 अप्रैल 2006 तक अकादमी कार्यालय, दिगम्बर जैन नसियां भट्टारकजी, सवाई रामसिंह रोड, जयपुर-4 से प्राप्त करें। कार्यालय में आवेदन पत्र पहुँचने की अंतिम तिथि 15 मई 2006 है।

ह्न **डॉ. कमलचन्द सोगाणी**

प्रवचनसार का सार

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

अठारहवाँ प्रवचन

प्रवचनसार परमागम के ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार के ज्ञानज्ञेय-विभागाधिकार पर चर्चा चल रही है।

अभी तक विस्तार से यह बात हुई कि जीव क्या-क्या नहीं है ? देह नहीं है, मन नहीं है, वाणी नहीं है, कर्म नहीं है; इनका कर्ता-भोक्ता भी नहीं है; और अब यह समझाते हैं कि आखिर जीव है क्या ?

जीव का स्वरूप समझाते हुए १७२वीं गाथा में लिखा है कि ह्न

अरसमरूबमगंधं अव्वत्तं चेदणागुणमसद्दं।
जाण अलिंगग्गहणं जीवमणिद्दिट्ठसंठाणं ।।१७२।।

(हरिगीत)

चैतन्य गुणमय आतमा अव्यक्त अरस अरूप है।
जानो अलिंगग्रहण इसे यह अनिर्दिष्ट अशब्द है।।१७२।।

जीव को अरस, अरूप, अगंध, अशब्द, अव्यक्त, चेतनागुण से युक्त, अलिंगग्रहण (लिंग द्वारा ग्रहण न होने योग्य) और जिसका कोई संस्थान नहीं कहा गया है ह्न ऐसा जानो।

यह गाथा आचार्य कुन्दकुन्द के पाँचों परमागमों में उपलब्ध होती है। समयसार में ४९वीं, नियमसार में ४६वीं, पंचास्तिकाय संग्रह में १२७वीं, अष्टपाहुड़ के भावपाहुड़ में ६४वीं गाथा है और इस प्रवचनसार ग्रन्थ में १७२वीं गाथा है। यह गाथा न केवल कुन्दकुन्दाचार्य के पाँचों ग्रन्थों में है; अपितु षट्खण्डागम में भी है। इससे इस गाथा का महत्त्व सहज ही समझ में आ जाता है।

इसी सन्दर्भ में एक बात और समझने की है कि जितने भी प्राचीन ग्रन्थ हैं; उनमें से कुछ ग्रन्थ संग्रह ग्रन्थ हैं। द्रव्यसंग्रह एवं पंचास्तिकाय संग्रह आदि ग्रन्थों के अन्त में जुड़े हुए संग्रह शब्द यह बताते हैं कि इनकी गाथाओं का कहीं न कहीं से संग्रह किया गया है।

जैसा कि हम सब जानते हैं कि पहले सबकुछ मौखिक ही चलता था; बाद में उसी विषय-वस्तु को लिखितरूप में व्यवस्थित किया गया। आचार्यों को जो गाथाएं याद थीं, उन्हीं गाथाओं को लिखितरूप में व्यवस्थित करके प्रस्तुत कर दी गईं।

यद्यपि आज भी ऐसा चलता है; तथापि इतना अन्तर है कि आज प्राचीन विषय-वस्तु को उद्धरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। पहले यह सब इसलिए संभव नहीं था कि यदि एक ग्रन्थ की दो सौ प्रतियाँ हस्तलिखित होंगी, तो उन दो सौ प्रतियों में पृष्ठ संख्या अलग-अलग होगी। ऐसी स्थिति में ग्रन्थों में अन्य ग्रन्थों के कथनों को उद्धृत करके लिखना सम्भव ही नहीं था।

इससे भी बड़ी बात यह है कि सभी आचार्यगण यही समझते थे कि यह सब तो भगवान महावीर की वाणी है, इसमें हमारा क्या है ? इसलिए अपने ग्रन्थों को संग्रहरूप में प्रस्तुत करने में उन्हें कोई संकोच नहीं था।

यह भी हो सकता है कि यह गाथा पहले से प्रचलित रही हो, जिसे कुन्दकुन्दादि आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में संग्रह कर लिया हो। कुछ भी हो; यह जैनदर्शन की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मूल गाथा है।

इस गाथा में भी अरस-अरूपादि जो विशेषण दिये गये हैं; उनसे भी यही प्रतीत होता है कि वे यहाँ मनुष्यादिरूप असमानजातीयद्रव्यपर्याय से ही भेदविज्ञान करने की बात कर रहे हैं। वे देहदेवल में विराजमान, किन्तु देह से भी भिन्न भगवान आत्मा को पहचानने का असाधारण लक्षण बता रहे हैं।

असाधारण लक्षण वह होता है, जो दूसरों में नहीं पाया जाता। जो गुण दूसरों में नहीं पाये जाये, असाधारण लक्षण में उन्हें ही रखा जाता है। आत्मा के असाधारण धर्म की चर्चा में भी यह बात प्रमुख है कि जिन गुणों से हम आत्मा को पहचान लें, वे आत्मा के असाधारण गुण हैं।

यहाँ पर यह नहीं समझना चाहिए कि असाधारण गुण मुख्य होते हैं, इसलिए उनकी चर्चा कर रहे हैं और बाकी के गुण गौण हैं, इसलिए उनकी चर्चा नहीं कर रहे हैं; अपितु आत्मा को पहचानने में असाधारण गुण सुविधाजनक होते हैं; इसलिए उनका वर्णन किया जा रहा है।

आत्मा रस नहीं है, रूप नहीं है, गंध नहीं है ह्न यह बात तो नकारात्मक हुई। यद्यपि लोक में जुआ नहीं खेलना, माँस-मदिरा का सेवन नहीं करना, हिंसा नहीं करना, चोरी नहीं करना इत्यादि नकारात्मक बिन्दुओं को भी गुणों के रूप में देखा जाता है; तथापि सकारात्मक गुणों के बिना नकारात्मक गुणों का ज्यादा महत्त्व नहीं होता।

फिर भी आत्मा को पहिचानने के लिए ये अरस, अरूप, अगंध एवं अशब्द गुण अधिक उपयोगी हैं; क्योंकि रूप-रस-गंध वाले शरीर से आत्मा को भिन्न समझना है।

इस गाथा का सरलार्थ यह है कि जीव अरस, अरूप, अगंध, अव्यक्त, अशब्द, अलिंगग्रहण, चेतनागुणवाला और अनिर्दिष्ट संस्थानवाला है।

इस गाथा में महत्त्वपूर्ण बिन्दु यह है कि आजतक हमारे ज्ञान का उपयोग इन्द्रियों के माध्यम से ही होता रहा है; इसकारण वह मात्र पुद्गलों को ही जानता रहा है; क्योंकि इन्द्रियाँ रूपादि विषयों की ही ग्राहक हैं और रूपादिक विषय पुद्गलमयी हैं।

इसप्रकार यहाँ दो बातें कही, प्रथम तो यह कि शरीर जीव नहीं है और दूसरी यह कि जीव शरीर की अंगभूत जिन इन्द्रियों के माध्यम से ज्ञान का उपयोग कर रहा है; उनसे भगवान आत्मा समझ में नहीं आएगा; क्योंकि इन्द्रियाँ जिन चीजों के जानने में निमित्त हैं, वे रूपादि गुण आत्मा में हैं ही नहीं।

इन्द्रियज्ञान ह्न इस पद में इन्द्रिय को ज्ञान का विशेषण बना दिया गया है; किन्तु वास्तव में ज्ञान इन्द्रिय या अतीन्द्रिय नहीं होता।

जिसप्रकार पानी स्वयं अपने आप में पीला या नीला नहीं होता; किन्तु पीले या नीले रंगों के संयोग से उसे पीला या नीला कहा जाता है; उसीप्रकार ज्ञान तो ज्ञान होता है, वह इन्द्रिय या अतीन्द्रिय नहीं होता है; किन्तु जिस ज्ञान का उपयोग इन्द्रियों के माध्यम से हुआ, उस ज्ञान को इन्द्रिय ज्ञान नाम दे दिया और जो ज्ञान इन्द्रियों के माध्यम से नहीं हुआ, उस ज्ञान को अतीन्द्रिय नाम दे दिया।

इसप्रकार इन्द्रियज्ञान और अतीन्द्रियज्ञान ह्न ज्ञान के ये भेद इन्द्रियों की अपेक्षा ही किये गये हैं। इन्द्रियज्ञान में तो इन्द्रिय की अपेक्षा है ही; किन्तु अतीन्द्रियज्ञान में भी इन्द्रिय के अभाव की अपेक्षा ही मुख्य रही है। वास्तव में तो ज्ञान को अतीन्द्रिय विशेषण देने का कोई मतलब ही नहीं है; क्योंकि ज्ञान तो ज्ञान है। उसे आत्मोत्थ ज्ञान कहें तब भी ठीक है; लेकिन अतीन्द्रियज्ञान कहने में तो स्पष्ट ही इन्द्रिय की अपेक्षा है। इन्द्रियज्ञान में

इन्द्रियों की सकारात्मक अपेक्षा है और अतीन्द्रियज्ञान में इन्द्रियों की नकारात्मक अपेक्षा है।

'चश्मे से देखनेवाला' यह कहना तो किसी अपेक्षा उचित माना जा सकता है; किन्तु बिना चश्मे से देखनेवाले को बिना चश्मेवाला कहने की क्या जरूरत है ? उसके स्थान पर मात्र ऐसा कहना चाहिए कि देखनेवाला। सीधा देखनेवाले में चश्मे की अपेक्षा क्यों हो ? इसीप्रकार जब ज्ञान सीधे ही आत्मा को जान रहा है, तो उस ज्ञान को अतीन्द्रिय कहकर इन्द्रियों को बीच में लाने की जरूरत ही क्या है ?

यदि कोई कहे कि ज्ञान का अतीन्द्रिय विशेषण तो आचार्यों ने लगाया है, उन्हीं ने अतीन्द्रियज्ञान शब्द का प्रयोग किया है।

अरे भाई ! हम लोगों ने आजतक इन्द्रियों के माध्यम से ही देखा-जाना है और पुद्गल को ही देखा-जाना है; इसकारण हमने इन्द्रिय के माध्यम से होनेवाले ज्ञान को ही ज्ञान समझ लिया है। इन्द्रियों के बिना भी देखा-जाना जा सकता है ह्न यह बात हमारी कल्पना में भी नहीं आई; इसलिए आचार्यों ने ज्ञान को अतीन्द्रिय विशेषण लगाकर समझाया है।

आचार्यों ने तो यह अपेक्षा हमें समझाने के लिए लगाई है; किन्तु जिन्हें अतीन्द्रियज्ञान है, उन्हें तो ऐसी कोई अपेक्षा ही नहीं है। जिसप्रकार इन्द्रियज्ञान ज्ञान नहीं है; उसीप्रकार अतीन्द्रियज्ञान भी ज्ञान नहीं है। ज्ञान तो मात्र ज्ञान है, वह न तो इन्द्रिय है और न ही अतीन्द्रिय।

इस संबंध में समयसार के सर्वविशुद्धज्ञानाधिकार की वे गाथाएँ भी ध्यान से पढने योग्य हैं; जिनमें यह कहा गया है कि कलई दीवार की नहीं, अपितु कलई कलई की है। वहाँ आचार्य कहते हैं कि दीवाल पर जो कलई पुती हुई है, वह कलई दीवाल की नहीं है; क्योंकि दीवाल जुदी है और कलई जुदी है। दीवाल के परमाणु और प्रदेश अलग हैं और कलई के परमाणु और प्रदेश अलग हैं, उन दोनों में परस्पर अत्यंताभाव है। कलई को दीवाल की कहना ह्न यह व्यवहार है। ऐसा भी नहीं कह सकते हैं कि कलई है ही नहीं; क्योंकि कलई उस दीवाल पर पुती हुई है, लिपटी हुई है।

दीवाल पर कलई तो दिख रही है; किन्तु पीछे की दीवाल नहीं दिख रही है। उस दीवाल में जो सीमेन्ट, कांक्रीट, चूना व पत्थर लगा है, वह नहीं दिख रहा है; किन्तु यह संयोगरूप कलई दिख रही है; इसलिए इस संयोग का ज्ञान कराने के लिए यह कह दिया जाता है कि दीवाल सफेद है; लेकिन ऐसा कहना व्यवहार है; क्योंकि सफेद तो कलई है, दीवार नहीं।

इसके बाद वही पर आचार्य कहते हैं कि कलई कलई की है और दीवाल दीवाल की है। इस संबंध में मेरा कहना यह है कि वहाँ पर एक कलई के अलावा दूसरी कलई कौन-सी है ? वास्तव में दूसरी कलई तो है ही नहीं, एक ही कलई है।

अरे भाई। जिसका कोई दूसरा भाई न हो और वह यह कहे कि मैं ही मेरा भाई हूँ, तो वास्तव में वे कोई दो अलग-अलग व्यक्ति नहीं है, एक ही व्यक्ति है। इसीप्रकार कलई तो एक ही है; लेकिन कलई कलई की है -ऐसा कहकर एक ही वस्तु में दो भेद किए गए हैं। दीवाल की कलई ह्न ऐसा कहना असद्भूतव्यवहार है और कलई की कलई ह्न ऐसा कहना सद्भूतव्यवहार है। स्वयं में ही भेद करना भेदव्यवहार अर्थात् सद्भूतव्यवहार है।

आचार्य कहते हैं कलई कलई की है ह्न ऐसे सद्भूतव्यवहार से क्या लाभ ? वास्तव में कलई तो कलई है। कलई की कलई है ह्न इसमें संबंध की बात झलकती है और संबंध दो वस्तुओं में होता है। कलई तो कलई है ह्न यह निश्चय है। इसी को आगे और भी बढाया जा सकता है कि कलई तो कलई है; इसमें दो कलई बोलने की क्या आवश्यकता है ? कलई है ह्न इतना ही पर्याप्त है।

जिसप्रकार कलई दीवाल की है ह्न यह व्यवहार है; उसीप्रकार आत्मा पर को जानता है ह्न यह भी व्यवहार है। कलई दीवार पर लगी हुई है ह्न यह बात सही है; वैसे ही पर को आत्मा ने जाना ह्न यह भी सही है; किन्तु पर को जानने के कारण व्यवहार है। आत्मा ने पर को जाना; किन्तु तन्मय होकर नहीं जाना; यह मैं हूँ ह्न ऐसा नहीं जाना; ये मुझसे भिन्न पदार्थ है ह्न ऐसा जाना, इसलिए वह व्यवहार है।

आत्मा ने स्वयं को जाना ह्न इसमें भी भेदव्यवहार है। आत्मा ने आत्मा को जाना ह्न ऐसा कहने पर कोई दो आत्मा तो है नहीं कि एक आत्मा तो वह हो जिसने जाना और दूसरी आत्मा वह हो जिसको जाना गया हो। यह तो एक ही आत्मा में भेदव्यवहार है; क्योंकि आत्मा में ज्ञेयत्व नामक धर्म भी है, जिसके कारण उसको जाना गया और ज्ञान नामक गुण भी है जिससे उसने जाना। इसप्रकार एक ही आत्मा में दो भेद करने से भेदव्यवहार हो गया।

पर को आत्मा व्यवहार से जानता है; इसलिए यदि यह बात झूठी है तो फिर आत्मा ने जो स्वयं को जाना ह्न वह भी झूठा ही सिद्ध होगा; क्योंकि यहाँ भी ज्ञाता और ज्ञेय का भेद खड़ा किया गया है।

जिस व्यवहार की वजह से पर को जानना झूठा है तो फिर उसी व्यवहार की वजह से स्वयं को जानना भी झूठा है; इससे स्वयं को जानना भी असंभव हो जाएगा।

इन्द्रियज्ञान हेय है ह्न यह बात तो सही है; क्योंकि उससे पुद्गल ही जानने में आता है और पुद्गल को जानने से मूल प्रयोजन की सिद्धि नहीं होती; किन्तु पुद्गल जान लेने से हमारे ऊपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ेगा ह्न ऐसी बात भी नहीं है। यदि यह बात हो तो सर्वज्ञ भगवान के ऊपर भी विपत्ति आ जाय; क्योंकि वे पर को जानते हैं।

इसमें एक बात अवश्य है कि हम सब रागी-द्वेषी जीव हैं, हमें उन्हीं पदार्थों से राग-द्वेष होता है, जिन्हें हम जानते हैं; किन्तु वह जानने के कारण नहीं होता; अपितु अन्दर की विकृति के कारण होता है, मिथ्यात्व के कारण होता है।

इसप्रकार इस गाथा में दो बातें मुख्यरूप से कही गई हैं। प्रथम तो, यह कि शरीर में जो रूप, रस, गंध, स्पर्श हैं, वे आत्मा में नहीं हैं; इसलिए आत्मा शरीर से भिन्न है। दूसरी बात यह है कि जो रूपादि इन्द्रियों के माध्यम से जाने जाते हैं, वे आत्मा में हैं ही नहीं; इसलिए आत्मा को जानने के लिए इन्द्रियाँ बेकार हैं। भगवान आत्मा आँख खोलकर देखने की चीज नहीं है; अपितु आँख बन्द करके देखने की चीज है।

यहाँ पर एक बात सीखने की है। जब दो विद्वान एक ही गाथा का थोड़ा अलगह्नअलग अर्थ करते हैं अथवा एक संक्षेप में करता है और दूसरा विस्तार से करता है, तो हमें उन्हें दो पार्टियों में खड़ा नहीं करना चाहिए। अरे भाई। ऐसा भी हो सकता है कि एक ही विद्वान एक गाथा का अर्थ पहली बार संक्षेप में करे और दूसरी बार विस्तार से करे। वास्तव में यह कोई मतभेद नहीं है। हमें तो यह देखना चाहिए कि उसका जो अर्थ किया जा रहा है, वह उसमें से निकल रहा है या नहीं ? **(क्रमश:)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

अनुभूति के लिए निश्चय नय आवश्यक : डॉ. भारिल्ल

नई दिल्ली (दिनांक 5 मार्च 2006) : तत्त्वज्ञान की अनुभूति एवं दु:खों से मुक्ति के लिए व्यवहार नय को छोड़कर निश्चयनय की शरण में जाना होगा अर्थात् अपनी आत्मा में रमण करना होगा, तभी कल्याण सम्भव है। ह्न यह बात सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक प्रवक्ता तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल ने खारवेल सत्संग भवन, कुन्दकुद भारती के सभाकक्ष में सम्पन्न हुई कुन्दकुन्द स्मृति व्याख्यानमाला में मुख्य वक्ता के रूप में कही।

इस व्याख्यानमाला का आयोजन **पूज्य सिद्धान्तचक्रवर्ती आचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज** के सान्निध्य में श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय दिल्ली द्वारा किया गया था। डॉ. भारिल्ल ने आचार्य कुन्दकुन्दकृत समयसार में निबद्ध निश्चय-व्यवहार की सूक्ष्म विवेचना करते हुये कहा कि व्यवहार ग्रहण करना जितना आवश्यक है, उतना ही आवश्यक छोड़ना भी। आपने कहा कि यदि व्यवहार को अपनायेंगे नहीं तो लोक व्यवहार नहीं चल सकता और यदि उसको छोड़ा नहीं तो तत्त्व की अनुभूति नहीं की जा सकती। आपने अपने कथन की पुष्टि करते हुए कहा कि जिसप्रकार नदी पार करने के लिए नाव में बैठना जितना आवश्यक है, पार पहुँचने पर नाव से उतरकर उसको छोड़ना भी उतना ही आवश्यक है। यदि नाव में ही बैठे रहे तो पार करना कठिन है।

आचार्यश्री ने अपने आशीर्वचन में कहा कि 2000 वर्ष पूर्व आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा रचित ग्रन्थ समयसार भारतीय वाङ्मय का शिरोमणि ग्रन्थ है। मनुष्य अन्न खाने से नहीं, बल्कि तत्त्वज्ञान से जीवित रहता है। वही दु:खी है, जिसके पास तत्त्वज्ञान नहीं है।

विद्यापीठ के कुलपति प्रो. वाचस्पति उपाध्याय ने भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित तेरहवी शती ई. के जैनाचार्य पार्श्वदेवकृत तथा आचार्य बृहस्पति द्वारा सम्पादित ग्रन्थ संगीत समयसार का लोकार्पण किया और बताया कि 1995 में आचार्यश्री की प्रेरणा से स्थापित इस व्याख्यानमाला का यह 11 वाँ चरण पहली बार कुन्दकुन्द भारती में आयोजित किया गया है।

सभा की अध्यक्षता डॉ. वाचस्पति उपाध्याय ने की। पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, श्रीमती शरयूताई दफ्तरी, पद्मश्री ओमप्रकाशजी जैन, डॉ. सुदीपजी जैन दिल्ली, डॉ. अनेकान्तजी जैन दिल्ली, डॉ. सत्यप्रकाशजी जैन, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा जयपुर, पण्डित राकेशजी शास्त्री, श्री सतीशजी जैन, श्री महेन्दकुमार जैन आदि महानुभावों ने अपनी उपस्थिति से सभा को गौरवान्वित किया। डॉ. वीरसागर जैन ने संचालन एवं श्री त्रिलोकचन्द कोठारी ने आभार व्यक्त किया।

ह्न अखिल बंसल

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

19 से 21 मार्च, 2006	**जयपुर**	**युनिवर्सिटी सेमिनार**
31 मार्च से 5 अप्रैल, 06	**कोलकाता**	**सिद्धचक्र विधान**
7 से 9 अप्रैल, 2006	**दिल्ली**	**गुरुदेव जयन्ती**
26 से 29 अप्रैल, 2006	**देवलाली**	**गुरुदेव जयन्ती**
09 से 26 मई, 2006	**देवलाली**	**प्रशिक्षण-शिविर**
26 मई से 18 जुलाई, 06	**विदेश**	**धर्म प्रचारार्थ**
23 जुलाई से 1 अगस्त,06	**जयपुर**	**शिक्षण-शिविर**

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित

४० वाँ शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर, देवलाली-महा. में

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर द्वारा संचालित 40 वाँ वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर इस वर्ष मंगलवार, दिनांक 9 मई से शुक्रवार, 26 मई 2006 तक देवलाली-नासिक (महा.) में होना निश्चित हुआ है। **इस शिविर में मुख्यरूप से धार्मिक अध्ययन करानेवाले बन्धुओं (अध्यापकों) एवं मुमुक्षु भाईयों को शिक्षण-प्रशिक्षण विधि से प्रशिक्षित किया जायेगा।**

इस अवसर पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा इन्दौर, ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, ब्र. यशपालजी जैन जयपुर, ब्र. हेमचन्दजी 'हेम', पण्डित संजीवकुमारजी गोधा जयपुर आदि के प्रवचनों और कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।

इनके अतिरिक्त डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, पण्डित शैलेषभाई शाह तलोद, पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री भिण्ड आदि से भी सम्पर्क किया जा रहा है तथा शिक्षण-प्रशिक्षण में सहयोग देनेवाले अनेक प्रशिक्षित अध्यापक भी पधारेंगे, जिनके द्वारा बालकों, प्रौढ़ों और महिलाओं के लिये शिक्षण-कक्षाओं की व्यवस्था की जायेगी।

बालबोध-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये बालबोध पाठमाला भाग - 1, 2, 3 की तथा प्रवेशिका-प्रशिक्षण में प्रवेश पाने के लिये वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग -1, 2, 3 की प्रवेश प्रतियोगितात्मक लिखित परीक्षा दि. 8 मई, दोपहर 2 बजे देवलाली में ली जावेगी, जिसमें प्रथम श्रेणी के अंक प्राप्त करना आवश्यक होगा; अत: प्रवेशार्थी उक्त पुस्तकों की पूरी तैयारी करके आवें।

ध्यान रहे, प्रवेशिका प्रशिक्षण में उन्हें ही प्रवेश दिया जायेगा, जो बालबोध प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। आपके यहाँ से कितने व कौन-कौन भाई-बहिन शिविर में पधार रहे हैं, इसकी सूचना निम्नांकित पतों पर अवश्य भेजें; ताकि आपके आवास एवं भोजनादि की समुचित व्यवस्था की जा सके।

देवलाली का पता – पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट, कहाननगर, लामरोड,देवलाली,जि.नासिक (महा.) फोन: (0253) 2492278,2491044

जयपुर का पता – डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) फोन-(0141) 2707458, 2705581

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) मार्च (द्वितीय) 2006
RJ / J. P. C / FN-064 / 2006-08

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,**डबल एम.ए.जैनविद्या व धर्मदर्शन तथा इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127